महाकाव्य :-

'काव्य' की परिभाषा संस्कृत साहित्य-शास्त्रियों ने भिन्न-भिन्न प्रकार से की है। परन्तु इन सभी परिभाषाओं में सर्वमान्य तथ्य यह है कि (i) कवि की रचना ही काव्य है - 'कवेः कर्म काव्यम्' (ii) जो भी रचना पाठक अथवा श्रोता के हृदय में रसोत्पत्ति करवाने में समर्थ हो, वही काव्य है। संस्कृत में काव्य के मुख्य रूप से दो भेद हैं - श्रव्य तथा दृश्य। दृश्य काव्य के अन्तर्गत रूपक का समावेश किया गया है तथा श्रव्य काव्य में पद्य, गद्य एवं चम्पू काव्यों का समावेश किया गया है। पद्यकाव्य के पुनः तीन भेद होते हैं - महाकाव्य, खण्डकाव्य एवं मुक्तक काव्य।

काव्य के सभी भेदोपभेदों में महाकाव्य का महत्त्वपूर्ण स्थान है। 'महाकाव्य' शब्द महत् और काव्य इन दो शब्दों के समास से बना है। इसमें जीवन का सर्वांगीण चित्रण किया जाता है।

सर्वप्रथम आचार्य भामह ने महाकाव्य के लक्षणों को देने का प्रयास किया। उसके पश्चात् अग्निपुराण, दण्डी के काव्यादर्श, हेमचन्द्र के काव्यानुशासन तथा विश्वनाथ के साहित्यदर्पण में भी महाकाव्य के स्वरूप

एवं लक्षणों की विस्तृत विवेचना की गई है। साहित्यदर्पण में प्राप्त महाकाव्य का लक्षण सर्वांगीण और व्यापक है। विश्वनाथ के अनुसार महाकाव्य का लक्षण है-

सर्गबन्धो महाकाव्यं तत्रैको नायकः सुरः।
सद्वंशः क्षत्रियो वापि धीरोदात्तगुणान्वितः॥
एकवंशभवाः भूपाः कुलजा बहवोऽपि वा।
शृंगारवीरशान्तानामेकोऽङ्गी रस इष्यते।
अङ्गानि सर्वेऽपि रसाः सर्वे नाटकसंधयः॥
इतिहासोद्भवं वृत्तमन्यद् वा सज्जनाश्रयम्।
चत्वारस्तस्य वर्गाः स्युस्तेष्वेकं च फलं भवेत्॥
आदौ नमस्क्रियाऽऽशीर्वा वस्तुनिर्देश एव वा।
क्वचिन्निन्दा खलादीनां सतां च गुणकीर्तनम्॥
एकवृत्तमयैः पद्यैरवसानेऽन्यवृत्तकैः।
नातिस्वल्पा नातिदीर्घाः सर्गा अष्टाधिका इह॥
कवेर्वृत्तस्य वा नाम्ना नायकस्येतरस्य वा।
नामास्य सर्गोपादेयकथया सर्वनाम तु॥
(साहित्यदर्पण परिशिष्ट - 6)

अर्थात् यह सर्गों में विभक्त होता है। इसका नायक देवता, कुलीन क्षत्रिय या एक वंशज कुलीन अनेक राजा होते हैं। शृंगार और वीर तथा शान्त रस में से कोई एक प्रधान रस होता है और अन्य उसके सहायक। इसमें सभी नाटकीय संधियां होती हैं। इसका कथानक ऐतिहासिक होता है या किसी सज्जन व्यक्ति से सम्बद्ध। इसमें चतुर्वर्ग- धर्म, अर्थ,

काम और मोक्ष का वर्णन होता है। उनमें से किसी एक फल की प्राप्ति का वर्णन होता है। प्रारम्भ में देवादि को नमस्कार, आशीर्वाद, या वस्तुनिर्देश होता है। प्रत्येक सर्ग में एक छन्द वाले पद्य रहते हैं किन्तु अन्त में छन्द परिवर्तन हो जाता है। इसमें आठ से अधिक सर्ग होते हैं जो न बहुत छोटे और न बड़े होते हैं।

महाकाव्यों का उद्भव ऋग्वेद के आख्यान सूक्तों, इन्द्र, वरुण, विष्णु और उषा आदि के स्तुतिमन्त्रों तथा नाराशंसी और गाथाओं से हुआ है। ब्राह्मणग्रन्थों, आरण्यक ग्रन्थों और उपनिषदों में भी अनेक अवतरण, दृष्टान्त और संवाद हैं जो साहित्यिक कला की दृष्टि से निस्सन्देह उच्चकोटि के हैं। रामायण और महाभारत आगे चलकर परवर्ती काव्यों एवं महाकाव्यों के लिए उपजीव्य ग्रन्थ हो गए हैं। रामायण और महाभारत के बाद कालिदास की उत्पत्ति तक जो महाकाव्य लिखे गए थे वे केवल नाममात्र ही शेष हैं। इस काल के कुछ ग्रन्थों के नाम इसप्रकार हैं – ① पाणिनि (५५० ई०पू०) कृत जाम्बवती जय या पाताल विजय। इसमें १८ सर्गों में श्रीकृष्ण का पाताल में जाकर जाम्बवती के विजय और परिणय की कथा वर्णित है।

② वररुचि (३५० ई० पू०) ने 'स्वर्गारोहण' नामक काव्य बनाया था। इसे पतञ्जलि (प०उ०ना) ने

'वाररुचं काव्यम्' कहकर संबोधित किया है। समुद्र-
गुप्त के 'कृष्णचरित' काव्य में इसका उल्लेख है।

(3) महाभाष्यकार पतञ्जलि (150 ई०पू०) ने भी इसी शृंखला में 'महानन्द काव्य' लिखा है।

इसके पश्चात् महाकवि कालिदास का काव्याकाश में उदय होता है। कालिदास को ही वस्तुतः प्रौढ़, परिष्कृत, प्राञ्जल एवं मनोज्ञ काव्यशैली का प्रवर्त्तक कहा जा सकता है। उसने जो आदर्श उपस्थित किए, वह परकालीन कवियों और महाकवियों के लिए अनुकरणीय हुए। इति।।

विषय-संस्कृत, डॉ० ओम प्रकाश आर्य